नाम - डॉ. मोती लाल शाकार

महाविद्यालय का नाम - दुर्ग महाविद्यालय

संकाय — कला

पद नाम — सहायक प्राध्यापक

विषय — 'भाषाविज्ञान'

शीर्षक — 'भाषा उत्पत्ति : प्रत्यक्ष एवं परोक्ष मार्ग'

भाषा उत्पत्ति : प्रत्यक्ष और परोक्ष मार्ग

डॉ. मोती लाल शाकार
सहायक प्रध्यापक भाषा विज्ञान
दुर्गा महाविद्यालय , रायपुर

भाषा उत्पत्ति का प्रश्न आज भी संभ्रम की जलकुंभी में उलझा हुआ है। इसकी उत्पत्ति के संबंध में विद्वानों द्वारा जितने भी तर्क उपस्थित किए गए, उनमें कुछ तो अनुमान तथा कल्पना पर आधारित हैं, तथा हास्यास्पद है, कुछ अधूरे तथा आंशिक है और कुछ वैविध्य तथा वैचित्र्य से भरपूर है। भाषा की उत्पत्ति से संबंधित कोई भी ऐसा मत नहीं जो दगीला न हो तथा जिस पर अध्येताओं और समीक्षकों की समवेत स्वीकृति की मुहर लगी हो।

कुछ भाषाशास्त्री यह भी कहते हैं कि भाषाविज्ञान चूँकि एक विज्ञान है, इसलिए अनुमान और अटकलों के लिए यहाँ कोई स्थान नहीं विज्ञान तो विद्यमान तथ्यों के आधार पर ही किसी पदार्थ की समुचित पड़ताल कर एक प्रामाणिक तथा ठोस निष्कर्ष निकालता है। उक्त भाषाविज्ञानियों के अनुसार भाषा–उत्पत्ति संबंधी मतों पर विचार करना भाषाविज्ञान का काम नहीं हैं। यह कार्य उसकी कार्यपरिधि के बाहर है। इस महत्वपूर्ण शोध को वे मानव इतिहासज्ञों, दार्शनिकों तथा समाजशास्त्रियों को सौंपते है।

वस्तुतः भाषा–उत्पत्ति का प्रश्न स्वयं में बेहद पेचीदा है। यह प्रश्न उतना ही जटिल है, जितना मानव उत्पत्ति का प्रश्न। भाषा –उत्पत्ति के संबंध में श्री हेमचंद पाण्डेय की सोच कुछ इस प्रकार है "भाषा के जन्म से लेकर उसके मौखिक रूप के विकसित होने तक दस–पन्द्रह हजार साल लगे ही होंगे। इस अनुमान के आधार पर भाषा का जन्म 30000 साल पहले हुआ होगा और आज यह अनुमान सही हो तो मनुष्य के उत्थान की कहानी में भाषा का जन्म बहुत पुरानी घटना नहीं है, क्योंकि मनुष्य की उत्पत्ति कम से कम बीस लाख साल पुरानी मानी जाती है। सृष्टि के उद्भव और उत्थान की कहानी में तो यह बहुत हाल की घटना है।"[1]

1866 ईसवी में पेरिस में स्थापित "भाषाविज्ञान परिषद्" में भाषा की उत्पत्ति विषयक विचार को इस आधार पर प्रतिबंधित करने का प्रस्ताव पारित किया गया क्योंकि "भाषाविज्ञान एक विज्ञान है और इसके अंतर्गत केवल उन्हीं विषयों को लिया जा सकता है, जिन पर विचार करने के लिए वैज्ञानिक और ठोस आधार उपलब्ध हो जबकि लाखों वर्ष पूर्व उत्पन्न भाषा पर विचार करने के लिए ऐसे किसी आधार का नितान्त अभाव है। अतः भाषा की उत्पत्ति के प्रश्न को भाषाविज्ञान का अंग नहीं माना जा सकता।"[2] इस आधार पर भाषा की उत्पत्ति के प्रश्न की प्रायः उपेक्षा ही होती आ रही है।

भाषा –उत्पत्ति की प्रत्यक्ष व परोक्ष मार्ग के विभिन्न मतों एवं सिद्धांतो द्वारा समझ सकते हैं–

<u>प्रत्यक्ष मार्ग</u> – भाषा की उत्पत्ति के संबंध में प्राचीनतम विचार यूनानियों द्वारा व्यक्त किए गए है। 'ओल्ड टेस्टामेंट' में भी इस संबंध में प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से कुछ बातें कहीं गई है। इसी प्रकार भारत, मिस्त्र, अरब तथा अन्य देशों की धार्मिक तथा भाषाशास्त्र–विषयक पुस्तकों में भाषा की उत्पत्ति

के संबंध में कुछ–कुछ बातें मिल जाती है। 8वीं सदी के पूर्व व्यक्त लगभग सारे मत दिव्य सिद्धांत के अंतर्गत आ सकते हैं। भाषा की उत्पत्ति के संबंध में कई प्रकार के सिद्धांत,मतवाद या वाद विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रस्तुत किए गए हैं।

<u>दैवी उत्पत्ति का सिद्धांत :–</u>

भाषा उत्पत्ति से संबंधित मतों में यह सबसे प्राचीन मत है। उनके विचार से भाषा इस सृष्टि के लिए ईश्वर प्रदत्त एक अनुपम भेंट है। "उनका कहना है कि ईश्वर ने ही मनुष्य को बोलना सिखाया। पूरब के साथ–साथ पश्चिम के लोग भी इस मत के समर्थक रहे हैं। यही कारण है कि प्रायः सभी धर्मों के प्रणेताओं ने अपने–अपने धर्म ग्रंथों को ईश्वर विरचित बताया है। हिंदू, संस्कृत, भाषा को देववाणी कहते हैं और वेदों को ईश्वरीय ग्रंथ मानते है। संस्कृत भाषा तथा उसके व्याकरण के मूलाधार पाणिनी के 14 सूत्र शिव के डमरू से निकले माने जाते हैं।"[3]

सा मागधी मूल भाषा नरा याददिकवि।
ब्रम्हानों चस्सुतालापा संषुद्धा चापि भासर।।।"[4]

<u>समीक्षा</u>– आज के इस वैज्ञानिक युग में भाषा–उत्पत्ति संबंधी उक्त मत बासी पड़ चुका है। सच बात तो यह है कि यदि भाषा ईश्वर प्रदत्त होती है तो सभी प्राणियों पशु पक्षियों अथवा मनुष्यों की भाषा एक ही क्यों नहीं हुई? इस संबंध में हर्डर का कहना है कि यदि भाषा ईश्वर विरचित होती तो वह अधिक पूर्ण और उपयुक्त होती।

<u>धातु सिद्धांत</u>–

इस ओर संकेत प्लेटो ने किया था, किंतु व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने का श्रेय जर्मन प्राफेसर हेस को है। मैक्समूलर ने भी पहले इसे स्वीकार किया और अपनी पुस्तक में इसे स्थान दिया, किंतु बाद में इसे निरर्थक कहकर छोड़ दिया।

इसी को डिंग –डांगवाद या रणन सिद्धांत भी कहा गया है। कुछ लोग गलती से डिंग डांगवाद का प्रयोग अनुकरण सिद्धांत के लिए करते हैं।

"धातु सिद्धांत का डिंग डांगवाद नाम आधार है,जो आगे कि बातों से स्पष्ट हो जाएगा ।

इस सिद्धांत के अनुसार संसार की हर चीज की अपनी ध्वनि होती है । यदि हम एक डंडे से एक काठ एक लोहे, एक सोने, एक कपड़े और एक कागज पर मारे तो देखेंगे सबका 'डिंग डांग' (मूल अर्थ घंटे पर मारने का शब्द या टन–टन) या सबकी 'ध्वनि' अलग–अलग होगी। इसी प्रकार आरंभ में मनुष्य में एक ऐसी सहजात शक्ति थी कि जिस किसी चीज के संपर्क में वह आता उसके लिए उसके मुँह से एक प्रकार की ध्वनि निकल जाती।" [5]

विभिन्न वस्तुओं की ये ध्वन्यात्मक अभ्यिक्तियॉं धातु थी। आरंभ में इस प्रकार से धातुओं की संख्या बहुत बड़ी थी, किंतु उनमें बहुत सी धीरे–धीरे लुप्त हो गई और केवल 400–500 धातुएं शेष रहीं। उन्हीं से भाषा की उत्पत्ति हुई।

<u>समीक्षा</u>– पहली बात तो यह है कि आदि मनुष्यों के संबंध में इस प्रकार की कल्पना के लिए कोई आधार नहीं है। कुछ कल्पनाएँ साधार होती हैं, इसीलिए उन्हें माना जाता है, किंतु यह तो निराधार कल्पना है, अतः सर्वथा व्याज्य है दूसरे मत भाषा केवल धातु से ही नहीं बनती। प्रत्यय

उपसर्ग आदि अन्य घटकों की भी आवश्यकता पड़ती है। इस मत में उनके लिए कुछ नहीं कहा गया है।

संकेत सिद्धांत –

इस मत के प्रमुख उद्घोषक पाश्चात्य समाज विचारक रूसों हैं। इस सिद्धांत के अन्य नाम 'निर्णय–सिद्धांत' तथा 'प्रतीक सिद्धांत' भी हैं। 'रूसो का कहना है कि भाषा ईश्वर प्रदत्त नहीं है,अपितु मानव प्रदत्त है। उनके अनुसार मानव पहले पशुओं की तरह हाथ पैर हिला डुलाकर या ऑखों के संकेत से अपनी भावाभिव्यक्ति किया करता था, किंतु उक्त संकेत मनुष्य की पूर्ण अभिव्यक्ति में सक्षम नहीं थे। बार–बार आंगिक संकेतों के अभिनयों से तंग होकर मनुष्य ने अपनी खुली अभिव्यक्ति के लिये एकत्र होकर विचार–विमर्ष किया। उन्होने विभिन्न वस्तुओं तथा अपनी वैचारिक लेन–देन के लिए कुछ ध्वनि संकेत स्थिर किए और कालान्तर में उक्त ध्वनि संकेतों से ही भाषा का विकास हुआ।'[6]

समीक्षा– तर्क के क्षीण रोएँ रेशो से बना हुआ यह मत भी भाषा उत्पत्ति के प्रश्न का कोई सटीक जबाव नहीं दे पाता। प्रश्न है, पहले जब भाषा ही नहीं थी, तो व्यक्ति ने पारस्परिक विचार विनिमय कैसे किया?क्योंकि भाषा और विचार का रिश्ता अटूट होता है। अल्प समय के लिए यदि स्वीकार भी कर लें कि भाषा के अभाव में वैचारिक आदान–प्रदान हो सकता था, तो फिर भाषा की आवश्यकता ही क्या थी?अतः इस सिद्धांत का स्वीकार करना पत्थर से पानी निचोड़ने जैसा ही होगा।

अनुकरण सिद्धांत –

यह अनुकरण तीन प्रकार का है – ध्वन्यात्मक,अनुकरणात्मक तथा दृश्यात्मक। इस सिद्धांत के प्रतिपादिकों के अनुसार "मनुष्य ने अपने आसपास के पशु–पक्षियों की भौं भौं,म्याऊँ–म्याऊँ ,कॉव–कॉव आदि ध्वनियों के निर्जीव पदार्थों से होने वाली कल–कल,छल–छल,तड़–तड़ ध्वनियों को तथा पदार्थ विशेष के देखने से उत्पन्न प्रतिक्रियात्मक बग–बग,दग–दग,जग–जग आदि ध्वनियों के अनुकरण पर शब्द बनाये और फिर इसी आधार पर भाषा का महल खड़ा हुआ।"[7]

समीक्षा– यह सिद्धांत अत्यंत स्वल्प शब्दों की रचना के आधार को ही स्पष्ट करता है किसी भी भाषा में अनुकरण मूलक शब्द संभवतः एक प्रतिशत से अधिक नहीं होंगे। शेष 99 प्रतिशत शब्दों के लिए इस सिद्धांत में कोई उत्तर नहीं है। इस प्रकार यह सिद्धांत उपेक्ष्य न होने पर भी अपूर्णता के कारण समग्रतः ग्राह्य नहीं।

मनोभावाभिव्यंकतावाद सिद्धांत –

इसी के अन्य प्रचलित नाम हैं मनोभावाभिव्यक्तिवाद, मनोरागव्यंजकवाद, आवेग सिद्धांत तथा पूह–पूहवाद आदि। "इस सिद्धांत के अनुसार भावावेश में मनुष्य के मुख से स्वतः निसृत हर्ष,शोक,भय, विस्मय तथा चिंता सूचक शब्दों –आह,ओह,हाय,हूँ,हॉ,छिः से धीरे धीरे भाषा का विकास हुआ है।"[8]

समीक्षा – इस सिद्धांत के विरूद्ध प्रथम तर्क यह है कि मनोभाव को अभिव्यक्ति देने वाले शब्द सभी भाषाओं में समान नहीं। संसार भर के कुत्ते अपना दुख एक प्रकार से रोकर प्रकट करते हैं परंतु संसार के सभी देशों के मनुष्य हर्ष–शोक की अभिव्यक्ति एक समान शब्दों में नहीं करते।

श्रम ध्वनि सिद्धांत

इस सिद्धांत के प्रयोक्ता पाश्चात्य भाषाविद् श्री न्वायर है। हिंदी में इस सिद्धांत के लिए एक और अनावश्यक विस्तार भार से बोझिल नाम प्रयुक्त किया जाता है। वह नाम है – 'श्रमपरिहरणमूलकतावाद'। श्रम करते समय व्यक्ति के मुह से जो ध्वनि निकलती है वह श्रम का परिहार नहीं करती बल्कि यह ध्वनि तो शारीरिक किया के साथ सहज रूप में व्यक्ति के मुँह से निकलकर श्रम करने में सहायक सिद्ध होती है।

भाषा उत्पत्ति के इस सिद्धांत में न्वायर के अनुसार " जब व्यक्ति शारीरिक श्रम करता है, तब उसकी सांस बड़ी तेजी से चलने लगती है। तेजी से चलती हुई सॉस के कारण व्यक्ति की स्तर–तंत्रियो में विविध प्रकार की कंपन पैदा होती है।

उक्त कंपन के साथ ही उसके मुँह से कुछ ऐसी ध्वनियॉ निकलती है, जिससे श्रमी व्यक्ति कुछ राहत पाता और वह अपना कार्य सरलता से करता रहता है,जैसे कपडा धोते समय धोबी के मुँह से छयो–छियो, नौका संचरण करते समय केंवट 'हैया–हैया' की ध्वनि करता है।"[9]

समीक्षा– ध्वनि सिद्धांत का संबंध भाव की व्रीवता एवं शारीरिक किया से है दोनों ही से निरर्थक ध्वनियों की स्फुलिंग निकलती है। इन ध्वनियों का संबंध शारीरिक श्रम से है न कि बौद्धिक मनन–चिंतन से। उक्त 'हइश्शा' अथवा छियो–छियो इत्यादि दो–चार ध्वनियों से भाषा का विशाल भंडार तैयार नहीं हो सकता । अतः यह सिद्धांत भी भाषा उत्पत्ति की कहानी कहने में अधिकांशतया अपनी असमर्थता व्यक्त करता है।

इंगित सिद्धांत–

डॉ. श्यामसुंदर दास ने इस सिद्धांत का नाम 'प्रतीक' सिद्धांत रखा है– " मनुष्य ने अपनी शारीरिक चेष्टाओं–कियाओं का वाणी द्वारा अनुकरण किया और उसी से भाषा निसृत हुई।" [10] उदाहरण सॉस अंदर की ओर खींचते समय अथवा पानी पीते समय होठों से बार–बार सटने से 'पा,या,बा' की ध्वनि होती है। इसी ध्वनि के अनुकरण पर अरबी भाषा के 'शरब' (पीना) धातु से हिंदी–उर्दू तथा फारसी का 'शरबत' आदि शब्द बने हैं।

समीक्षा –

भाषा उत्पत्ति से संबंधित यह सिद्धांत बेबुनियाद तथा लचर है, वह इसलिए कि दूसरों की नकल अथवा अनुकरण तो कुछ मायने भी रखता है, किंतु अपना ही अनुकरण बेहद नया अचरज पैदा करता है। यदि इंगितों से ही भाषा की उत्पत्ति होती तो पशु–पक्षियों में भी अब तक भाषा का विकास हो जाना चाहिए था।

संगीत सिद्धांत –

इस सिद्धांत में भाषा की उत्पत्ति मानव के संगीत से मानी जाती है। येस्पर्सन कहते हैं "भाषा की उत्पत्ति खेल के रूप में हुई और उच्चारणावयव खाली वक्त में गाने के खेल के उच्चारण करने में अभ्यस्त हुए, इसका समर्थन किया है।" [11] इसके अनुसार गाने (प्रेम,दुख आदि के अवसर पर) से प्रारंभिक अर्थविहीन अक्षर बने और विशेष स्थिति में उनका प्रयोग होने से उन अक्षरों से अर्थ का संबंध हो गया।

समीक्षा – आदिम मनुष्य भावुक अधिक रहा होगा और संभव है गुनगुनाने में उसे आनंद आता रहा हो, किंतु गुनगुनाने के अक्षरों से भाषा कैसे निकली साथ ही गुनगुनाने की बात भी अनुमान पर ही अधिक आधारित है। ऐसी स्थिति में इसे भी स्वीकार नहीं किया जा सकता।

परोक्ष मार्ग–

परोक्ष शब्द प्रत्यय का विलोम है, जिसका अर्थ सीधे–सीधे संबंधित न होने पर भी किसी न किसी रूप में संबंधित होना है।

इस परोक्ष मार्ग के तीन संबंध आधार हैं –

बच्चों की भाषा–

बच्चा आरंभ के वर्षो में निरर्थक ध्वनियों का उच्चारण करता है और उसे दूसरे के अनुकरण का कुछ भी ध्यान नहीं रहता। उस समय उसके बोलने की दशा से भाषा की आरंभिक दशा का कुछ अनुमान लगाया जा सकता है। " उस समय बच्चे कभी–कभी सर्वथा नये शब्द भी गढ़ लेते हैं जो आज की विकसित दशा में ग्राह्य रहे हों।" [12]

असभ्य जातियों की भाषा–

सभ्यता की दृष्टि से सर्वाधिक पिछड़े लोगों की भाषा के विश्लेषण से विकसित भाषा के प्रारंभिक रूप पर प्रकाश अवश्य पड़ सकता है परंतु इस संबंध में विचारणीय प्रश्न यह है कि आज किसी भी असभ्य जाति की भाषा अपने अत्यंत प्राचीन रूप में उपलब्ध ही कहाँ है? विज्ञान ने सभ्यता का कुछ न कुछ प्रसार तो सर्वत्र ही किया है। हाँ तुलनात्मक अंतर के आधार पर भाषा के मूल रूप का कुछ न कुछ अनुमान अवश्य लगाया जा सकता है।

आधुनिक भाषाओं का इतिहास–

आज किसी भी भाषा को लें, उसका अध्ययन करें और फिर पीछे उसके इतिहास का वहाँ तक अध्ययन करते जाएँ जहाँ तक सामग्री मिले। इस आधार पर भाषा के विकास का सामान्य सिद्धांत निकाल लें। भाषा की तुलना उसके प्राचीनतम उपलब्ध रूप से करें और देखें कि कौन सी बातें आज की भाषा में नहीं है, पर प्राचीन में है। इसके बाद हम यह आसानी से कह सकते हैं कि वे विशेषताएं यदि भाषा के प्राचीनतम उपलब्ध रूप में दस प्रतिशत हैं तो भाषा के बिलकुल प्रारंभ में सत्तर या अस्सी प्रतिशत रही होंगी।

निष्कर्ष –

भाषा उत्पत्ति संबंधित स्थापित सिद्धांतो में कौन सा मत दोष रहित है, यह कहना बहुत सरल नहीं है। प्रायः सभी मत वैज्ञानिक आधार से रहित लगते हैं। ऐसा प्रतीत होता है, जैसे इन सिद्धांतों की स्थापना के रूप में अंधेरी कोठरी में काली बिल्ली तलाशने का प्रयास किया गया हो। उन सिद्धांतों में एक ओर रूढ़िपोषण तथा पिष्टपोषण है, तो दूसरी ओर विभिन्नता एवं मौलिकता भी कम नहीं है। वस्तुतः निचोड़ रूप में भाषोत्पत्ति के संबंध में कुछ भी कहना अति जटिल है।

संदर्भ सूची :–

1. पांडेय डॉ. कैलाशनाथ भाषाविज्ञान का अनुशीलन,जय प्रकाशन गाजीपुर, पृ.43

2. शास्त्री डॉ. रामचंद्र वर्मा,भाषाविज्ञान,अनिता प्रकाशन,दिल्ली, पृ.24
3. पांडेय डॉ. कैलाशनाथ भाषाविज्ञान का अनुशीलन,जय प्रकाशन गाजीपुर, पृ.44
4. देव, डॉ. मंगल, पृ. 183
5. तिवारी,भोलानाथ ,भाषाविज्ञान,किताबमहल,इलाहाबाद, पृ.43
6. पांडेय, डॉ. कैलाशनाथ,भाषाविज्ञान का अनुशीलन, जय प्रकाशन गाजीपुर, पृ.46
7. शास्त्री, डॉ. रामचंद्र वर्मा,भाषाविज्ञान,अनिता प्रकाशन,दिल्ली, पृ.26
8. शास्त्री, डॉ. रामचंद्र वर्मा,भाषाविज्ञान,अनिता प्रकाशन,दिल्ली, पृ.26
9. पांडेय, डॉ. कैलाशनाथ,भाषाविज्ञान का अनुशीलन, जय प्रकाशन गाजीपुर, पृ.49
10. पांडेय, डॉ. कैलाशनाथ,भाषाविज्ञान का अनुशीलन, जय प्रकाशन गाजीपुर, पृ.49
11. तिवारी,भोलानाथ,भाषाविज्ञान,किताबमहल,इलाहाबाद, पृ.48
12. शास्त्री, डॉ रामचन्द्र वर्मा,भाषाविज्ञान,अनिता प्रकाशन,दिल्ली, पृ.28